सिमरन

भाग - ६

बाबा फरीद जी की माँ ने अपने पुत्र को नमाज़ पढ़ने की प्रेरणा देने के लिए चटाई के नीचे शक्कर रखकर, लालच देकर परमार्थ की ओर लगाया था।

हर माँ अपने बच्चों को सुघड़ तथा सयाना बनाने के लिए अनेक प्रकार से –

समझाती है
उत्तम उपदेश देती है
दिलासा देती है
हौंसला देती है
लालच देती है
झिड़कती है
डाँटती-फटकारती है

तथा साथ-साथ **प्यार भी करती है।**

इसी प्रकार गुरू साहिब ने अपने सिखों को माया के प्रपंच से बचाने के लिए तथा गुरमति की ओर लगाने के लिए गुरबाणी में कई विधियाँ अपनाई हैं। कहीं लालच देकर, कहीं प्यार देकर, कभी ताड़ना द्वारा तथा कभी ताकीदी हुक्म द्वारा हमें प्रभु-सिमरन करने की **प्रेरणा तथा**

मार्गदर्शन किया है –

से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि धिआइआ जी
तिन तूटी जम की फासी ।। (पृ. ११)

जो बोलहि हरि हरि नाउ तिन जमु छडि गइआ ।। (पृ. ६४५)

हरि सिमरत तेरी जाइ बलाइ ।।
सरब कलिआण वसै मनि आइ ।। (पृ. १९३)

सिमरत नामु किलबिख सभि काटे ।।
धरम राइ के कागर फाटे ।। (पृ. १३४८)

रे मन मूड़ सिमरि **सुखदाता**
नानक दास **तुझहि** समझावत ।। (पृ. १३८८)

बिनु हरि सिमरन सुखु नही पाइआ ।।
आन रंग फीके सभ माइआ ।। (पृ. १९४)

कहि कबीर चेतै नही मूरखु मुगधु गवारु ।।
रामु नामु जानिओ नही कैसे उतरसि पारि ।। (पृ. ११०५)

दुलभ देह पाई वडभागी ।।
नामु न जपहि ते आतम घाती ।।१।।
मरि न जाही जिना बिसरत राम ।।
नाम बिहून जीवन कउन काम ।। (पृ. १८८)

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही ।।
नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नही ।। (पृ. ६३१)

राम सिमरि राम सिमरि राम सिमरि भाई ।।
राम नाम सिमरन बिनु बूडते अधिकाई ।। (पृ. ६९२)

तजहु सिआनप सुरि जनहु सिमरहु हरि हरि राइ ।।
एक आस हरि मनि रखहु नानक दूखु भरमु भउ जाइ ।।
(पृ. २८१)

मनुष्य अपने जीवन में कई परिस्थितियों से गुजरता है । जीवन के इन अनेक पक्षों में से कुछ पर, गुरबाणी के प्रकाश में, विचार की जाती है –

'सुख' –

मनुष्य अपने स्वभाव अनुसार साँसारिक सुख, कुशल-मँगल, खुशी आदि ढूंढता आया है । अपने शारीरिक, मानसिक तथा पदार्थिक **सुखों** के लिए मनुष्य दिन-रात –

सोचता है
योजनाएं बनाता है
मेहनत करता है
उद्यम करता है
कठिन परिश्रम करता है
अपना आप न्यौछावर करता है

परन्तु फिर भी इन्सान को इकसार, सदैव तथा अटॅल सुख नहीं मिलता ।

सृष्टि के **'द्वैत भावना'** के कानून के अनुसार मायकी जीवन के दो पहलू (duality) होते हैं, जो एक दूसरे के विपरीत (opposite) हैं, जैसे कि –

सुख-दुख
खुशी-गमी
ठंडा-गर्म

मीठा-कड़वा

सफेद-काला

सुन्दर-कुरुप

प्रकाश-अन्धकार

नम्रता-अहंकार

दिन-रात

गुण-अवगुण

नेकी-बदी

पुन्य-पाप

स्वर्ग-नरक

जीवन-मरण

हँसना-रोना

प्यार-घृणा

'चड़दीआं कला-ढहदीआं कलां' (उन्नति-अवनति)

आदि ।

इलाही 'हुकुम' अनुसार हर वस्तु का **उलटा पहलू** उसके अन्दर ही **छुपा तथा समाया हुआ है,** जिस प्रकार 'प्रकाश' में 'अन्धकार' छुपा हुआ है, 'सुख' में 'दुख' छुपा हुआ है । दिन के पश्चात रात आनी जरूरी है, उसी प्रकार 'सुख' के बाद **'दुख'** आना अनिवार्य है । इस तरह जिस 'सुख' के लिए हम इतना यत्न करते हैं, कठिन परिश्रम करते हैं – वह **'दुख'** में बदल जाता है ।

सुख कै हेति बहुतु दुखु पावत सेव करत जन जन की ।।
दुआरहि दुआरि सुआन जिउ डोलत नह सुध राम भजन की ।।
(पृ. ४११)

सुख कउ मागै सभु को दुखु न मागै कोइ ।।
सुखै कउ दुखु अगला मनमुखि बूझ न होइ ।। (पृ. ५७)

प्रत्येक 'जीव' अपने मन के रंग व बनावट अनुसार सुख को समझता व भोगता है । जिस परिस्थिति को एक जीव 'सुख' समझता है – उसको दूसरा प्राणी सुख नहीं मानता । प्रत्येक जीव का 'मायकी सुख' के विषय में **भिन्न-भिन्न विचार** होता है, जिसको प्राप्त करने के लिए वह अलग अलग तरीके अपनाता है । इसलिए **'सुख' की धारणा हमारी मानसिक दशा व रंग से सम्बन्धित है ।**

जिस परिस्थिति को प्राणी आज 'सुख' समझता है, वह कुछ समय पश्चात् निजी अनुभव अनुसार 'दुख' प्रतीत होने लगता है । **ऐसे परिवर्तनशील सुख के लिए हम सारी उम्र यत्न तथा कठिन परिश्रम करते रहते हैं ।**

उदाहरणतया जब किसी के घर पुत्र का जन्म होता है, तो बड़ी खुशियाँ मनायी जाती हैं तथा सुख महसूस करते हैं । परन्तु जब वही बच्चा बीमार हो जाये, नालायक निकल आये या मर जाये तो वह मानसिक 'सुख'– **'दुख' तथा चिंता में बदल जाता है ।**

सुखु मांगत दुखु आगै आवै ।। (पृ ३३०)

दूसरे शब्दों में सांसारिक **'मायकी सुख' अस्थायी तथा परिवर्तनशील है, स्थायी तथा अटॅल नहीं ।**

इन **अस्थायी मायकी सुखों** को प्राप्त करने के लिए हमारे सारे **प्रयत्न व्यर्थ जाते हैं ।**

उदाहरणतया इन्सान शराब तथा अन्य कई प्रकार के नशों का प्रयोग अस्थाई शारीरिक 'सुख' के लिए करता है, जिनका परिणाम अंततः **'दुख' निकलता है ।**

इसी प्रकार तुच्छ मानसिक वासनाओं की चेष्टा में से इन्सान सुख तथा स्वाद ढूंढता है। इस क्षणभंगुर स्वाद के भोगने से अनेक ला-इलाज बीमारियां, जैसे – टी.बी., सिफलिस, कौढ़, 'एड्स' आदि लग जाती हैं, जिन से जीवन नारकीय बन जाता है।

सुखु मांगत दुखु आगल होइ ।।
सगल विकारी हारु परोइ ।। (पृ. २२२)

जेता मोहु परीति सुआद ।।
सभा कालख दागा दाग ।।
दाग दोस मुहि चलिआ लाइ ।।
दरगह बैसण नाही जाइ ।। (पृ. ६६२)

जेते रस सरीर के तेते लगहि दुख ।। (पृ. १२८७)

इस प्रकार बचपन, जवानी, गृहस्थ, बुढ़ापा आदि के सुखों की कल्पना, ज्ञान तथा निश्चय भी बदलते रहते हैं। परन्तु हम यह भूल जाते हैं कि हमारे सारे मायकी सुखों **की 'कल्पना' परिवर्तनशील, अस्थायी तथा 'कूड़'** है – क्योंकि यह **'कूड़' माया पर आधारित है। इसलिए यह मायकी सुख तथा इनकी कल्पनाएं भी सब 'कूड़' हैं।**

तभी गुरबाणी में हमें ताड़ना की गयी है –

जन नानक **भगवंत भजन बिनु सुखु सुपनै भी नाही ।।**
(पृ. १२३१)

सुखु नाही रे हरि भगति बिना ।। (पृ. २१०)

बिनु हरि नाम न सुखु होइ करि डिठे बिसथार ।। (पृ. ४८)

बिनु हरि सिमरन सुखु नही पाइआ ।।
आन रंग फीके सभ माइआ ।। (पृ. १९४)

बिनु हरि भजन नाही निसतारा
सूखु न किनहूं लहिआ ।। (पृ. २१५)

हरि बिसरत काहे सुखु जानहि ।। (पृ. १८४)

दूसरी ओर, स्थायी तथा अटॅल 'सुख' की प्राप्ति के लिए गुरबाणी हमें इस प्रकार प्रेरणा करती है –

जे लोड़हि **सदा सुखु भाई ।।**
साधू संगति गुरहि बताई ।।
ऊहा जपीऐ केवल नाम ।।
साधू संगति पारगराम ।। (पृ. ११८२)

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ।।
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ।। (पृ. २६२)

सिमरि सिमरि नानक सुखु पाइआ ।।
आठ पहर तेरे गुण गाइआ ।। (पृ. १०६)

सगल दूख का होवत नासु ।।
नानक नामु जपहु गुनतासु ।। (पृ. २९०)

सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहु ।।
आपि जपहु अवरह नामु जपावहु ।। (पृ. २९०)

हरि सिमरत सदा होइ अनंदु सुखु
अंतरि सांति सीतल मनु अपना ।। (पृ. ८६०)

हलति सुखु पलति सुखु नित सुखु सिमरनो
नामु गोबिंद का सदा लीजै ।। (पृ. ६८३)

गुरबाणी में गोबिंद-सिमरन को **सब सुखों का सागर** बताया गया है –

सुख सागर गोबिंद सिमरणु
भगत गावहि गुण तेरे राम ।। (पृ. ९२५)

सुख सागर प्रभु विसरउ नाही
मन चिंदिअड़ा फलु पाई ।। (पृ. ६२०)

'जैसा सेवीऐ तैसो होइ' के गुरुवाक अनुसार हमारे ख्यालों या कर्मों का प्रभाव हमारे मन पर पड़ना अनिवार्य है ।

'माया' की कुसंगति से हमें परमेश्वर भूल जाता है तथा हमारे अन्दर **'मायकी मंडल' के अवगुण प्रवेश कर जाते हैं ।**

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे ।।
किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे ।।
(पृ. ८५७)

इह माइआ जगि मोहणी भाई
करम सभे वेकारी ।। (पृ. ६३५)

माइआ होई नागनी जगति रही लपटाइ ।।
इस की सेवा जो करे तिस ही कउ फिरि खाइ ।। (पृ. ५१०)

माइआ ऐसी मोहनी भाई ।।
जेते जीअ तेते डहकाई ।। (पृ. ११६०)

इसके विपरीत जब हम **साध संगति में विचरण करते हुए** प्रभु का 'सिमरन' करते हैं या प्रभु के गुणों को याद करते हैं तब उसके सारे दैवीय गुण हमारे मन में प्रवेश होते जाते हैं ।

गुरबाणी अनुसार सुख दुख क्या हैं ?

दूखु तदे जदि वीसरै
सुखु प्रभ चिति आए ।। (पृ. ८१३)

इसका तात्पर्य यह है कि **हरि को भूलना ही सारे दुखों का मूल कारण है तथा प्रभु का 'सिमरन' ही स्थायी तथा अटॅल सुखों का खजाना है।**

माया के 'अग्नि-शोक-सागर' में स्थायी सुख खोजना हास्यप्रद बात है, **क्योंकि इसमें स्थायी तथा अटॅल सुख है ही नहीं !**

एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै
भाउ दूजा लाइआ ।। (पृ. ९२१)

माइआ अगनि जलै संसारे ।। (पृ. १०४९)

जब हम इस माया रूपी दुख के सागर में, गोते खाते हुए चीखते-चिल्लाते हैं, तब अपनी कूड़ चतुराईयों द्वारा **अस्थाई सुख खोजते हैं** – जो शीघ्र ही अलोप हो जाते हैं । इन्सान इन स्वयं आमन्त्रित मायकी दुखों-क्लेशों से बचने के लिए 'शराब' आदि का नशा करता है । परन्तु इनका नशा शीघ्र ही उतर जाता है । नशा उतरने के उपरान्त उससे भी बुरी दशा हो जाती है ।

गुरबाणी में सभी दुखों क्लेशों से बचने का सबसे सरल तथा कारगर साधन **'सिमरन'** ही बताया गया है –

सिमरत सुआमी किलविख नासे ।।
सूख सहज आनंद निवासे ।। (पृ. १९४)

जिसु सिमरत दुख बीसरहि पिआरे
सो किउ तजणा जाइ ।। (पृ. ४३१)

जिसु सिमरत सगला दुखु जाइ ।।
सरब सूख वसहि मनि आइ ।। (पृ ११४८)

सिमरि सिमरि गुरु सतिगुरु अपना सगला दूखु मिटाइआ ।।
ताप रोग गए गुर बचनी मन इछे फल पाइआ ।। (पृ. ६१९)

कबीर अलह की करि बंदगी
जिह सिमरत दुखु जाइ ।। (पृ १३७४)

सदा सदा जपीऐ प्रभ नाम ।।
जरा मरा कछु दूखु न बिआपै आगै दरगह पूरन काम ।।
(पृ ८२४)

सदा सदा प्रभु सिमरीऐ भाई दुख किलबिख काटणहारु ।।
(पृ ६२०)

हम अपने कर्मों के अनुसार 'यम' के वश में पड़ते हैं तथा **यम की सजा भोगते हैं ।** यम की अत्यन्त कठोर मार या सजा से बचने का एकमात्र सरल तरीका या साधन गुरबाणी में सिमरन ही बताया गया है –

जिसु सिमरत दुख डेरा ढहै ।
जिसु सिमरत **जमु किछू न कहै ।।** (पृ १८२)

जिसु तू आवहि चिति तिसु **जम नाहि दुख ।।** (पृ. ९६०)

उचरत गुन गोपाल जसु दूर ते जमु भागै ।। (पृ. ८१७)

सिमरि सिमरि सुआमी प्रभु अपुना
निकटि न आवै जाम ।। (पृ. ६८२)

कटीऐ जम फासी सिमरि अबिनासी
सगल मंगल सुगिआना ।। (पृ. ७८१)

सिमरि सिमरि जीवत हरि नानक
जम की भीर न फही ।। (पृ १२२५)

प्रभु का **सिमरन** करने से जीव का शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक जीवन **पूर्णतय मंगलमय** हो जाता है अथवा **लोक सुखी व परलोक सुहेला हो जाता है** –

पारब्रहमु परमेसरु धिआइआ
कुसल खेम होए कलिआन ।। (पृ ८२५)

राम नामु मनि तनि आधारा ।।
जो सिमरै तिस का निसतारा ।। (पृ १००४)

मनि तनि जापीऐ भगवान ।।
गुर पूरे सुप्रसंन भए **सदा सूख कलिआन ।।** (पृ १३२२)

हरि के सिमरन से प्रभु के दरबार में मुख उज्जवल हो जाता है ।

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ।।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ।। (पृ ८)

जितु सिमरनि **दरगह मुखु ऊजल**
सदा सदा सुखु पाईऐ ।। (पृ ६२९)

जपि मन सति नामु सदा सति नामु ।।
हलति पलति **मुख ऊजल होई है**
नित धिआईऐ हरि पुरखु निरंजना ।। (पृ ६७०)

जिसु चिति आए बिनसहि दुखा ।।
हलति पलति तेरा ऊजल मुखा ।। (पृ ८९६)

इन्सान के मन में अनेक आशाएं-तृष्णाएं उत्पन्न होती रहती हैं । इन इच्छाओं की पूर्ति के लिए वह दिन-रात योजनाएं बनाता है, कर्म-क्रिया

करता है तथा कठिन प्रयास करता है । परन्तु फिर भी उसकी सारी इच्छाएं पूरी नहीं होती । यदि एक इच्छा पूरी होती है तो अन्य अनेक इच्छाएं पैदा हो जाती हैं । इस तरह मनुष्य को अनेक चतुराइओं व परिश्रम के बावजूद **निराशा का मुंह देखना पड़ता है ।**

परन्तु गुरबाणी में गुरू साहिब ने हमें ज्ञान प्रदान किया है कि **प्रभु के सिमरन** द्वारा इन्सान की अनेक आशाएं तथा इच्छाएं गुरू-कृपा द्वारा सहज ही पूरी हो जाती हैं –

इछा पूरकु सरब सुखदाता हरि जा कै वसि है कामधेना ।।
सो ऐसा हरि धिआईऐ मेरे जीअड़े ता सरब सुख पावहि मेरे मना ।।
(पृ ६६९–७०)

मै मनि तनि प्रभू धिआइआ ।।
जीइ इछिअड़ा फलु पाइआ ।। (पृ ७२)

सिमरि सुआमी सुखह गामी इछ सगली पुंनीआ ।। (पृ ७९–८०)

सिमरत सिमरत प्रभु आपणा सभ फल पाए आहि ।। (पृ ५१९)

सिमरि सिमरि दातारु मनोरथ पूरिआ ।।
इछ पुंनी मनि आस गए विसूरिआ ।। (पृ ५२४)

हरि की भगति करहु मनु लाइ ।।
मनि बंछत नानक फल पाइ ।। (पृ २८८)

आठ पहर हरि धिआईऐ राम ।।
मन इछिअड़ा फलु पाईऐ राम ।। (पृ ५७८)

भवजलु तरिआ हरि हरि सिमरिआ
सगल मनोरथ पूरे ।। (पृ ७८१)

जो जनु तेरा जपे नाउ ।।
सभि फल पाए निहचल गुण गाउ ।। (पृ ११८४)

जपि मन हरि हरि नामु नित धिआइ ।।
जो इछहि सोई फलु पावहि फिरि दूखु न लागै आइ ।।

(पृ ७२०)

हम **'द्वैत-भावना'** या **'मायकी दुनियां'** में विचरण करते हैं । यहाँ **'मैं-मेरी' का बोलबाला है ।** जहाँ 'मैं-मेरी' है, वहाँ शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, पदार्थिक –

डर
भय
शक
भ्रम
तौखला (फिकर)

आदि बना रहता है । इस से हमारा मन आंतकित तथा भयभीत रहता है तथा हम **चिंता के 'अग्नि-शोक-सागर' में जलते-भुनते व गोते खाते रहते हैं,** इस **'मानसिक तनाव'** से अनेक मानसिक बीमारियां पैदा हो जाती हैं, जैसे –

ब्लॅड प्रैशॅर (blood pressure)
दिल की बीमारियां (heart trouble)
जोड़ों का दर्द/गठिया का रोग (rheumatism)
मानसिक परेशानियां (nervous tension)

आदि ।

इन मानसिक रोगों से जीवन नरकमयी बन जाता है । गुरबाणी में इन रोगों के मूल कारण – डर, भय, फिकर, चिन्ता आदि से बचने का सरल उपाय – **'सिमरन' ही दर्शाया गया है ।**

हरि सिमरन ते **मिटी मेरी चिन्ता ।।** (पृ १८९)

हरि सिमरत **त्रास सभ नासै ।।** (पृ. १८९)

हरि बिसरत सहसा दुखु बिआपै ।।
सिमरत नामु भरमु भउ भागै ।। (पृ. १९०)

भै बिनसे निरभउ हरि धिआइआ ।।
साधसंगि हरि के गुण गाइआ ।। (पृ. १९१)

सिमरि सिमरि सभ **तपति** बुझाई ।। (पृ. १९१)

प्रभ कै सिमरनि भउ न बिआपै ।। (पृ. २६२)

मन तन अंतरि प्रभू धिआइआ ।।
गुर पूरे **डरु सगल चुकाइआ ।।** (पृ. ११५२)

नामु सिमरि **चिंता सभ जाहि ।।** (पृ. १९२)

जिस 'सिमरन' की गुरबाणी में इतनी महिमा की गयी है, उसकी ओर हमारा **ध्यान ही नहीं जाता** क्योंकि अनेक जन्मों से हम **माया के सिमरन का उल्टा चरखा** चलाते आ रहे हैं । मन को माया से मोड़कर उस पर **'आत्मिक कलम'** (पिउंद, grafting) **लगाने के लिए** उच्च एवं पवित्र साधसंगति अथवा सत-संगति की आवश्यकता है । बख्शे हुए गुरुमुख प्यारों की **लगातार संगति** तथा सेवा-भावना से मन सहज ही प्रभु के सिमरन में लग सकता है । इसी लिए गुरबाणी में हमें ताकीद की गयी है –

प्रभ का सिमरनु साध कै संगि ।।
सरब निधान नानक हरि रंगि ।। (पृ. २६२)

- क्रमशः